अध्याय–1
परिचय

1.0 भूमिका

भारतीय उपमहाद्वीप में महिलाओं की स्थिति के संदर्भ में कई विषयों के अंतर्गत शोध कार्य हुआ है। इन शोध कार्यो में सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, मनोवैज्ञानिक, ऐतिहासिक, आदि सभी संदर्भो में महिलाओं की स्थिति को समझने का प्रयास किया गया है। भूमण्डलीकरण के फलस्वरुप महिलाओं के सशक्तिकरण से संबंधित विभिन्न विषयों पर निरंतर कार्य किया जा रहा है। प्रश्न उठता है कि ग्रामीण महिलाओं का सशक्तिकरण क्यों होना चाहिए? उत्तर में हम निम्न कारणों को रेखांकित कर सकते हैं–

- 48 प्रतिशत ग्रामीण महिलाएं मुख्य व्यवसाय के रूप में कृषि क्षेत्र में योगदान दे रही है;
- जीवन के हर क्षेत्र में शहरी महिलाओं कि तुलना में ग्रामीण महिलाएं कहीं ज्यादा असमानता झेलती हैं;
- ग्रामीण महिलाओं की शिक्षा और बुनियादी स्वास्थ्य सेवाओं तक पहुँच तथा निर्णय लेने में उनकी भागीदारी अत्यधिक सीमित है; और
- कुल जनसंख्या में महिलाएं लगभग 50 प्रतिशत ही है परन्तु सामाजिक विकास में पुरूषों कि तुलना में उनकी भागीदारी 75 प्रतिशत तक मानी जाती है।

वर्तमान शोध प्रबंध में उन ग्रामीण महिलाओं के सशक्तिकरण पर शोधकार्य किया गया है जो समहित समूह की सदस्य हैं। यहाँ यह समझना आवश्यक है कि सशक्तिकरण क्या है? संक्षेप में सशक्तिकरण एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके माध्यम से शक्तिहीन (Powerless) अपने जीवन पर नियंत्रण स्थापित कर पाते हैं। यहाँ नियंत्रण का अर्थ काफी वृहद है, जिसे निम्नानुसार समझा जा सकता है :–

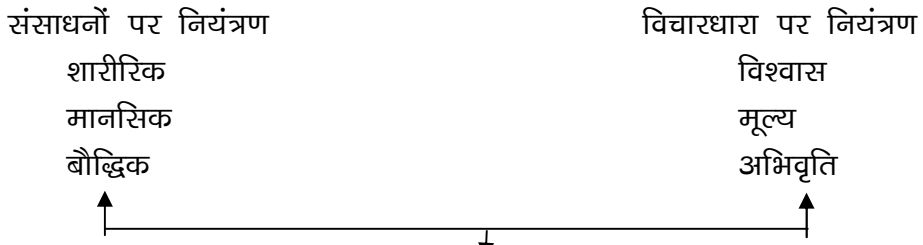

नियंत्रण प्राप्त करने के लिए व्यक्ति को आवश्यकता है–

अधिक आत्मविश्वास

और

स्वाभिमान (Self Esteem)

व

चेतना (Consciousness)

ताकि संसाधनों तक पहुँच हो सके

एवं पारंपरिक विचारधारकों में परिवर्तन हो।

उपरोक्तानुसार यह स्पष्ट होता है कि महिला सशक्तिकरण एक ऐसी प्रक्रिया है जिससे महिलाएँ इस योग्य हो पाती हैं कि वे स्वयं को संगठित कर आत्मनिर्भर बने, स्वतंत्र रूप से अपनी स्वेच्छा अनुसार कार्य करें, निर्णय ले, संसाधनों पर स्वयं का नियंत्रण बढ़ाए जिससे उनकी पराधीनता मिटे और उनकी यह आत्म–शक्ति आने वाली पीढ़ियों में भी संचारित होती रहे।

यह प्रक्रिया स्वयं की प्रभावोत्पादकता (Self Efficacy) से सामूहिक प्रभावोत्पादकता (Collective Efficacy) तक ले जाती है अर्थात् सर्वप्रथम स्वयं व्यक्ति का सशक्तिकरण होता है और फिर वह सामूहिक सशक्तिकरण की ओर अग्रसर होता जाता है। इसके लिये हमें सशक्तिकरण के चार मुख्य तत्वों को समझना होगा। ये हैं–

1 सूचना तक पहुँच (Access to information)

2 सहभागिता (Participation)

3 जिम्मेदारी (accountability)

4. स्थानीय संस्थागत क्षमता (Local Institutional Capability)

कुल मिलाकर यह निष्कर्ष प्राप्त होता कि सशक्तिकरण से –

- जीवन की गुणवत्ता एवं मानवीय गरिमा में वृद्धि होती है।
- विभिन्न क्षेत्रों में विकास का प्रभाव परिलक्षित होता है।
- आर्थिक विकास एवं गरीबी उपक्रमण का मार्ग प्रशस्त होता है।
- सुशासन की संभावना मजबूत होती है।

यहाँ गरीबी और महिला सशक्तिकरण को अलग–अलग मुद्दों के रूप में देखने की आवश्यकता है। एक तरफ, परिवार के अंदर असमानता का अर्थ यह है कि यदि परिवार की आयवृद्धि होती है तो आवश्यक नहीं कि परिवार की महिलाओं की आय में भी वृद्धि हो जबकि उस आय वृद्धि में उनका महत्वपूर्ण योगदान होता है। इसलिये यह पर्याप्त नहीं है कि नीतियों को परिवार के स्तर पर ही लक्षित किया जाये बल्कि परिवार के अंदर की असमानता को भी इसमें शामिल किया जाना चाहिये। दूसरी तरफ, महिलाओं के बीच जो अंतर है उससे यह भी अर्थ निकलता है कि सशक्तिकरण की रणनीतियां निर्धनतम महिलाओं तक नहीं पहुंच पाती हैं। इसलिये निर्धन व साधनहीन महिलाओं के लिये विशेष रणनीतियां तैयार करने की आवश्यकता है। इससे भी अधिक महत्वपूर्ण है सशक्तिकरण की रणनीति में पुरूषों को शामिल करना। यदि महिला केन्द्रित रणनीति का कोई नकारात्मक प्रभाव नजर आता है तो इसका यह अर्थ नहीं कि महिलाओं की आर्थिक संसाधनों तक पहुंच रोक दी जावे। यह एक मौलिक अधिकार है। इसका अर्थ है कि महिला केंद्रित नीतियों का जेंडर संबंधों पर संभावित कुप्रभाव जिसके परिमार्जन के लिये ऐसे रास्ते तलाशने होंगे जिससे परिवर्तन की इस प्रक्रिया में पुरूषों के सहयोग को बढ़ावा मिले एवं पुरूषों के आर्थिक संसाधन संबंधी प्रावधान को जेंडर असमानता को चुनौती देने का साधन बनाया जा सके। स्पष्टतः अल्पसंसाधनों एवं ऊर्जा को महिलाओं एवं उनके नेटवर्क से विमुख किये बगैर इस प्रकार का संतुलन बनाना कठिन है। यह पुरूषोन्मुख नीतियों की अवहेलना से संभव नहीं होगा। लेकिन इनके सशक्तिकरण के अध्ययन के पहले यह जानने का प्रयास किया गया है कि ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में महिलाओं की क्या स्थिति थी तथा उन्हें किस प्रकार की सामाजिक–आर्थिक परिस्थिति में अपना जीवनयापन करना होता था।

1.1 प्राचीन भारत में स्त्रियाँ

प्राचीन भारत में स्त्रियों की स्थिति में संबंधित दो वैचारिक सम्प्रदाय मिलते हैं। एक सम्प्रदाय का कहना है कि सित्रियाँ ''पुरूषों के बराबर'' थीं जब कि दूसरे सम्प्रदाय की मान्यता है कि स्त्रियों की स्थिति न केवल उपेक्षित थीं बल्कि उन्हें हेय दृष्टि से भी देखा जाता था। दोनों ही सम्प्रदायों ने अपने दृष्टिकोण की पुष्टि में धार्मिक साहित्य से उदाहरण दिए हैं। एक सम्प्रदाय के अनुसार ''जब स्त्री रास्ते में जा रही हो तो सभी उसे रास्ता दें''। हम जिनका सम्मान करते हैं, उनके साथ यही व्यवहार करते हैं, अतः यह दर्शाता है कि स्त्रियों को सम्मानजनक स्थान प्राप्त था। मनु ने कहा था – ''जहां स्त्रियों की दुर्दशा होती है वहां संपूर्ण परिवार को विनाश प्राप्त होता है किन्तु जहाँ वे

सुखी हैं वहाँ परिवार सदैव समृद्धि को प्राप्त करता है''। याग्वल्क्य ने भी कहा है, ''स्त्रियाँ पृथ्वी पर समस्त दैवीय गुणों का प्रतीक हैं, सोम ने अपनी समस्त पवित्रता उन्हें प्रदान की है, गान्धर्व ने मृदु वाणी, तथा अग्नि ने उन्हें अत्यंत आकर्षक बनाने के लिये अपनी समस्त चमक उन पर न्यौछावर कर दी है।'' स्त्रियों के विषय में इतने ऊँचे आदर्श स्थान–स्थान पर दोहराए गए हैं। महाभारत काल में स्त्रियाँ न केवल गृहस्थ जीवन का केन्द्र थीं बल्कि समस्त सामाजिक संगठन की आधार बिन्दु थीं।

1.2 वैदिक और उत्तर वैदिक काल में स्त्रियाँ

वैदिक एवं उत्तर वैदिक काल में स्त्रियों की स्थिति का निर्धारण इस तथ्य से किया जा सकता है कि उनको कितनी स्वतंत्रता प्राप्त थी तथा उन पर किस सीमा तक प्रतिबंध लगे हुये थे। वैदिक तथा रामायण–महाभारत (महाकाव्य) काल में स्त्रियाँ कभी भी पर्दा नहीं करती थीं। उन्हें अपने जीवनसाथी के वरण करने की पूर्ण स्वतंत्रता प्राप्त थी। वे शिक्षा प्राप्त कर सकती थीं। विधवाओं को पुनर्विवाह की अनुमति थी। घर में उन्हें पूर्ण स्वतंत्रता प्राप्त थी और उन्हें अर्द्धांगिनी माना जाता था। महाभारत में कहा गया था ''मृदु भाषी पत्नियाँ सुख में अपने पति की मित्र होती हैं, धार्मिक कृत्यों के समय वे उनके पिता के समान होती हैं, तथा दुःख के समय वे उनके माता के समान होती हैं''। गृहस्थ जीवन में स्त्रियाँ सर्वोपरि होती थी। इस प्रकार सामाजिक क्षेत्रों में स्त्रियों की स्थिति पूर्णरूपेण असहायों जैसी नहीं थी।

आर्थिक क्षेत्र में भी स्त्रियों की महत्वपूर्ण भूमिका थी। घर उत्पादन का केन्द्र था, वस्त्र बनाने का काम घर पर ही होता था। स्त्रियां कृषि कार्यों में भी अपने पति की सहायता करती थी। कुछ स्त्रियाँ अध्यापन कार्य भी कुशलतापूर्वक संचालित करती थी।

सम्पत्ति के उत्तराधिकार के विषय में स्त्रियों को कोई अधिकार प्राप्त नहीं थे। यद्यपि पुत्री के रूप में विवाहित स्त्रियों का अपने पिता की संपत्ति में कोई अधिकार नहीं होता था, फिर भी प्रत्येक अविवाहित पुत्री को अपने भाईयों को मिलने वाले पितृ धन का एक–चौथाई भाग प्राप्त करने का अधिकार था। मृत्यु के पश्चात् माँ की संपत्ति पुत्रों और अविवाहित पुत्रियों में समान रूप से बाँटी जाती थी। विवाहित पुत्रियों को सम्मान स्वरुप थोड़ा ही भाग मिलता था। स्त्रीधन की उत्तराधिकारी केवल अविवाहित पुत्रियाँ होती थीं। पत्नी के रूप में स्त्री का अपने पति की संपत्ति में कोई प्रत्यक्ष भाग नहीं होता था परंतु परित्यक्ता को अपने पति के धन का एक–तिहाई भाग प्राप्त करने का अधिकार था। विधवा स्त्री को संयमी व वैरागी जीवन व्यतीत करना पड़ता था।

विधवा माँ के रूप में उसे कुछ अधिकार थे। इससे यह स्पष्ट होता है कि यद्यपि स्त्रियों के साथ संपत्ति में अधिकार के विषय में पक्षपातपूर्ण व्यवहार किया जाता था फिर भी पत्नी और पुत्री के रूप में उन्हें कुछ संरक्षण प्राप्त था।

स्त्रियों की राजनैतिक स्थिति देश में राजनैतिक दशा एवं विद्यमान राजनैतिक प्रणाली पर निर्भर करती है। प्राचीन भारत में राजनैतिक प्रणाली राजतंत्र पर आधारित थी। स्त्रियों को सभाओं में प्रवेश की अनुमति नहीं थी क्योंकि इन स्थानों का प्रयोग राजनैतिक विचार-विमर्श के अलावा जुआ, मद्यपान आदि के लिए भी किया जाता था। कुछ उदाहरण ऐसे अवश्य हैं जबकि स्त्रियाँ अपने पति के साथ युद्ध स्थल में जाती थीं, जैसे रामायण में कैकेयी का युद्ध में जाना। मैगस्थनीज और कौटिल्य ने 'अर्थशास्त्र' में चन्द्रगुप्त मौर्य के महल में महिला अंगरक्षकों का संदर्भ दिया है।

धार्मिक क्षेत्र में पत्नी समस्त अधिकारों का उपयोग करती थी तथा नियमित रूप से अपने पति के साथ समस्त धार्मिक कृत्यों व संस्कारों में भाग लेती थी। वास्तव में धार्मिक कृत्य तब तक अपूर्ण माना जाता था जब तक पत्नी उसमें भाग नहीं लेती थी। स्त्रियाँ धार्मिक वार्तालापों में सक्रिय रूप से भाग लेती थी। वैज्ञानिक धार्मिक सिद्यांतों एवं रीतियों के संहिताकरण करने हेतु जनक जैसे राजाओं द्वारा आयोजित विश्व की अनोखी धार्मिक एवं सम्प्रदायों के सम्मेलनों में गार्गी, ब्रम्हवादिनी, वाचक्नवी जैसे विदुषी महिलाओं का भाग लेना एवं पुरूषों के साथ शास्त्रार्थ करना इस बात का द्योतक है कि प्राचीन भारत में स्त्रियों का धार्मिक क्षेत्र में उच्च स्थान था। इस प्रकार निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि वैदिक भारत में स्त्रियों की स्थिति संतोषप्रद थी। सामाजिक और धार्मिक क्षेत्रों में उन्हें अत्यधिक अधिकार प्राप्त थे लेकिन आर्थिक एवं राजनैतिक क्षेत्रों में उनके अधिकार सीमित थे। उन्हें पुरूषों के अधीन नहीं माना जाता था बल्कि पुरूषों के समान समझा जाता था।

1.3 पौराणिक काल में स्त्रियाँ

पौराणिक काल में स्त्रियों की स्थिति में गिरावट आयी। हिन्दू समाज में धार्मिक ग्रन्थों का ऐतिहासिक क्रम इस प्रकार से हैः- वेद, ब्राम्हण, उपनिषद, गृह-सूत्र, धर्मशास्त्र, स्मृतियां, रामायण व महाभारत और पुराण। सामाजिक क्षेत्र में विधवा विवाह का निषेध होने लगा, पति को स्त्री के लिये परमेश्वर का स्थान दिया जाने लगा, स्त्रियों के लिये शिक्षा का पूर्ण निषेध प्रारंभ हुआ, सती प्रथा प्रचलन में आई, पर्दा प्रथा प्रारंभ हुई तथा बहुपत्नी प्रथा व्यवहार में स्वीकार की जाने लगी। पत्नी और गुलाम

संपत्ति के अधिकारी नहीं होते थे। मान्यता के आधार पर स्त्री को उसके पति की संपत्ति के भाग से वंचित कर दिया गया।

1.4 बौद्ध काल में स्त्रियाँ

बौद्ध धर्म का उदय हिन्दुवादी प्रतिक्रिया के फलस्वरूप हुआ। ब्राम्हण तथा पुराणों के काल में स्त्रियों पर अनेक अन्यायपूर्ण एवं अनुचित सामाजिक निषेध थोप दिये गये। परन्तु बौद्ध काल में स्त्रियों की स्थिति में कुछ सुधार हुआ। धार्मिक क्षेत्र में स्त्रियों को स्पष्ट रूप से उत्कृष्ट स्थान प्राप्त हुआ। उनका अपना संघ बना जिसे भिक्षुणी संघ कहा गया। इस संघ के भी वही नियम निर्देश थे जो 'भिक्षुओं' के थे। संघ ने स्त्रियों को सांस्कृतिक कार्यक्रमों, समाज सेवा तथा सार्वजनिक जीवन में अनेक स्थलों पर भाग लेने के अवसर प्रदान किए। सामाजिक क्षेत्र में उन्हें सम्मानित स्थान प्राप्त हुआ। यद्यपि उनकी आर्थिक व राजनैतिक स्थिति में कोई परिवर्तन नहीं हुआ।

1.5 मध्यकाल में स्त्रियाँ

भारत पर मुसलमानों का प्रथम आक्रमण आठवीं शताब्दी में हुआ जिस काल में शंकराचार्य जीवित थे। शंकराचार्य के नेतृत्व में हिन्दू समाज बढ़ते हुए बौद्ध धर्म का सामना करने की विधियां खोजने में व्यस्त था। शंकराचार्य ने बौद्ध धर्म के बढ़ते प्रभाव को कम करने के उद्देश्य से वेदों की उत्कृष्टता पर पुनः बल दिया और वेदों में स्त्रियों को समानता का अधिकार प्राप्त था। ग्यारहवीं शताब्दी में पुनः महमूद गज़नवी ने भारत पर आक्रमण किया और विजय प्राप्त की। इस काल के पश्चात अठारहवीं शताब्दी के मध्य तक जब ब्रिटिश साम्राज्य की स्थापना हुई अथवा लगभग 700 वर्षो तक, सामाजिक संस्थाओं का विखण्डन, परंपरागत राजनैतिक संरचना में उथल-पुथल, बड़ी संख्या में लोगों का प्रवासन तथा देश में आर्थिक मंदी आदि ने सामाजिक जीवन में विशेष रूप से महिलाओं के पतन में योगदान किया। पर्दा प्रथा इस सीमा तक बढ़ गई कि स्त्रियों के लिये कठोर एकान्त तक का नियम बन गया। शिक्षण की सुविधा पूर्णरूपेण समाप्त हो गई। तथापि पन्द्रहवीं शताब्दी में स्थिति में कुछ परिवर्तन आया। इसी अवधि में रामानुजाचार्य ने प्रथम भक्ति आन्दोलन का प्रवर्तन किया जिसने भारत की स्त्रियों के धार्मिक व सामाजिक जीवन में नवीन प्रवृत्तियों का सूत्रपात किया। चैतन्य, नानक, मीरा, कबीर, रामदास, तुलसीदास व तुकाराम जैसे संतों ने स्त्रियों के लिये धार्मिक पूजा/अर्चना का सबल पक्ष प्रस्तुत किया। यद्यपि स्त्रियों के प्रति उनकी धारण उनके समय के प्रचलित दृष्टिकोण से मुक्त नहीं थी, फिर भी इस आंदोलन ने

स्त्रियों की धार्मिक स्वतंत्रता का मार्ग प्रशस्त कर दिया। पर्दा प्रथा समाप्त कर दी गई । कथा व भजन कीर्तन में जाने से स्त्रियां घरेलू काम काज से मुक्त हो गईं। भक्ति आंदोलन ने गृहस्थाश्रम पर बल दिया। परंतु संतों को अपनी पत्नी की इच्छा के बिना सन्यास लेने की अनुमति प्रदान नहीं की गई। इसमें स्त्रियों के महत्वपूर्ण अधिकार निहित थे। इस आंदोलन के दूसरे प्रभाव भी हुए। संतों ने स्त्रियों को धार्मिक पुस्तकों के अध्ययन व स्वंय को शिक्षित बनाने के लिये प्रेरित किया। इस प्रकार भक्ति आंदोलन ने स्त्रियों में नये प्राणों का संचार किया। किन्तु इस आंदोलन ने आर्थिक संरचना में कोई परिवर्तन नहीं किया। अतः आर्थिक तौर पर स्त्रियों की निम्न स्थिति बनी रही।

1.6 ब्रिटिश काल में स्त्रियों की स्थिति

इस काल में समाज सुधारकों द्वारा स्त्रियों की स्थिति में सुधार के लिये कुछ प्रयास अवश्य किये गये, परंतु ब्रिटिश सरकार की तरफ से इस दिशा में कोई विशेष कदम नहीं उठाये गये और इसका परिणाम यह हुआ कि 20वीं शताब्दी तक स्त्रियों की स्थिति में किसी प्रकार का संतोषजनक सुधार नहीं हुआ। अंग्रेजों ने अपने शासन की सृदृढ़ता की दृष्टि से किसी धर्मिक मान्यता एवं कार्य में हस्तक्षेप करने का प्रयास नहीं किया परंतु समाज सुधारकों ने स्त्री की स्थिति को ऊंचा उठाने के लिये अनेक प्रयास किये। राजा राममोहन राय ने सन् 1828 ई. में ब्रह्म समाज की स्थापना की तथा इनके प्रयत्नों के परिणामस्वरूप सन् 1828 में सती प्रथा को बंद करा दिया गया। विधवा पुनर्विवाह के लिये भी उन्होंने अपनी आवाज उठाई। महर्षि दयानंद ने इस ओर एक नया कदम उठाया और 1875 में बंबई में आर्य समाज की स्थापना की। आर्य समाज ने पर्दा प्रथा का भी विरोध किया और स्त्री शिक्षा के लिये विद्यालय तथा कन्या गुरूकुल खोले। सन् 1872 में एक विशेष विवाह कानून पास हुआ। श्री भंडारकर, रानाडे आदि ने भाी समाज सुधार के काफी प्रयत्न किये। इनके प्रयत्नों के फलस्वरूप स्त्री शिक्षा तथा अधिकारों के लिये बंबई में आंदोलन प्रारंभ हो गये। बहु विवाह का विरोध तथा विधवा पुनर्विवाह आंदोलन प्रारंभ हुये। परिणामस्वरूप सन् 1856 में विधवा पुनर्विवाह सरकार द्वारा वैध मान लिया गया। भारत में आधुनिक युग के नेता महात्मा गांधी ने स्त्रियों के लिए सामाजिक–आर्थिक आदि सभी तरह के अधिकारों पर जोर दिया।

स्त्रियों ने गांधीजी के दोनों असहयोग आंदोलनों में अपने साहस का परिचय दिया और पर्दा तोड़कर आंदोलन में भाग लिया। सन् 1921 में अखिल भारतीय महिला सम्मेलन का आयोजन किया गया जिसने जगह जगह स्त्री शिक्षा केन्द्र खोले।

सन् 1941 में विश्वविद्यालय महिला संघ की स्थापना हुई। इसका मुख्य उद्देश्य स्त्री शिक्षा का प्रसार था। इस संघ के द्वारा छात्राओं को छात्रवृत्तियां भी दी जाती थी। सन् 1945 में कस्तूरबा गांधी राष्ट्रीय स्मारक निधि की स्थापना की गई जिसने महिलाओं के उत्थान हेतु अनेक कार्य किये। ग्रामीण स्त्रियों की आर्थिक सहायता के लिये महिला राष्ट्रीय समिति तथा ईसाई युवती समिति आदि ने भी अनेक उल्लेखनीय कार्य किये।

भारत में 1940 तक स्त्रियों की निम्न दशा के प्रमुख कारण अशिक्षा, आर्थिक निर्भरता न होना, धार्मिक निषेध, जाति बंधन, स्त्री नेतृत्व का अभाव, तथा पुरूषों का उनके प्रति उदासीन दृष्टिकोण आदि थे। मेटसन ने हमारी संस्कृति में स्त्रियों की एकान्तता तथा उनके निम्न स्तर के लिये पाँच कारकों को उत्तरदायी ठहराया है। यह है हिन्दू धर्म, जाति व्यवस्था, संयुक्त परिवार, इस्लामी शासन तथा ब्रिटिश उपनिवेशवाद। हिन्दुवाद के आदर्शों के अनुसार पुरूष स्त्रियों से श्रेष्ठ होते हैं और स्त्री व पुरूषों को भिन्न-भिन्न भूमिकाएं निभानी चाहिये। स्त्रियों से माता व गृहणी की भूमिकाओं की और पुरूषों से राजनैतिक व आर्थिक भूमिकाओं की आशा की जाती थी। हिन्दू धर्म ग्रन्थों में स्त्रियों का स्थान समाज में एक आश्रित के रूप में माना गया है। जाति व्यवस्था ने भी जन कार्यों व सार्वजनिक मामलों में स्त्रियों की भागीदारी पर प्रतिबंध लगाए। पितृसत्तात्मक संयुक्त परिवार ने स्त्रियों की स्वतंत्रता कम कर दी और आयु, लिंग व नातेदारी के आधार पर परिवार में उनकी स्थिति निम्न होती गई। मुस्लिम युग में स्त्रियों की दशा में और भी पतन हुआ। मुस्लिम नवाबों तथा जागीरदारों की कुदृष्टि से बचाने के उद्देश्य से बाल विवाह सामान्य रूप से होने लगे। यद्यपि ब्रिटिश शासकों ने हिन्दुओं के सामाजिक विधानों में व्यवधान डालने का प्रयत्न नहीं किया लेकिन उन्नीसवीं शताब्दी के अंतिम दशकों तथा बीसवीं शताब्दी के प्रारंभिक पच्चीस वर्षों में कुछ पुरूष समाज सुधारकों के प्रयत्नों से महिला आंदोलन को बल मिला, तब ब्रिटिश सरकार कुछ वैधानिक कदम उठाने तथा कुछ सामाजिक प्रथाओं को कम करने या उनमें परिवर्तन करने के लिये सहमत हो गई।

यह एक निर्विवाद तथ्य है कि सदियों से स्त्रियाँ आर्थिक क्षेत्र में किसी न किसी रूप से अपना योगदान देती रही है। आखेट युग में घर में अनेक आर्थिक धंधे जैसे बांस की उपयोगी वस्तुएं बनाना, कपड़ा बुनना इत्यादि कार्य स्त्रियां किया करती थीं। पशुपालन युग में पशुओं की देखभाल, गोबर के कंडे बनाना, विभिन्न दुग्ध उत्पाद बनाना, कपड़ा बुनना इत्यादि कार्यों में स्त्रियाँ पूर्णतः संलग्न थी। कृषि युग से ही स्त्रियां पुरूषों की कृषि कार्य जैसे खेतों में काम करना, अनाज जमा करना, कूटना,

पीसना आदि में सहायता पहुँचाती आ रही है। इस तरह विभिन्न प्रकार से स्त्रियां आर्थिक क्षेत्र में अपना योगदान देती रही है। औद्योगिक क्रांति के प्रभाव से स्त्रियों को घर से बाहर भी काम के अवसर मिलने लगे। स्त्री श्रम सस्ते दर पर उपलब्ध होने के कारण स्त्री मजदूरों की मांग बढ़ती गई और उन्नीसवीं सदी की समाप्ति के बाद सभी देशों के श्रमजीवी वर्ग में स्त्रियों का महत्व बढ़ता गया। अमेरिका में 33 प्रतिशत, पूर्व जर्मन फेडरल रिपब्लिक में 36 प्रतिशत, पोलेण्ड में 44.8 प्रतिशत, पूर्व सोवियत रूस में 45 प्रतिशत तथा भारत में 27 प्रतिशत स्त्रियां किसी न किसी रूप में कार्यरत रही हैं। भारत में भी उन्नीसवीं सदी के अंतिम चरण से आर्थिक क्षेत्रों में स्त्रियों का स्थान महत्वपूर्ण होता आया है।

उन्नीसवीं सदी में निम्न वर्ग की स्त्रियों को महंगाई के कारण विवश हो कर मजदूरी करनी पड़ती थी। स्त्रियों से खेतों में जोतने भिराने का कार्य और पत्थर की खदानों में तथा चाय के बगानों में काम लिया जाता था। किंतु मध्यमवर्गीय नारी व्यवसाय में देर से आई। स्त्री शिक्षा को गति प्रदान करने के लिये और स्त्रियों को आर्थिक रूप से अपने पैरों पर खड़ा करने के लिये सबसे पहले शिक्षण के द्वार खुले। दूसरा मुख्य कार्य जो स्त्रियों के लिये उचित माना गया वह था परिचारिका व दाई का कार्य। इस क्षेत्र में भी सन 1875-76 में दाईयों के प्रशिक्षण के लिये नये वर्ग शुरू किये गये। जैसे-जैसे आर्थिक विकास होता गया वैसे-वैसे व्यावसायिक क्षेत्रों में भी स्त्रियों की संख्या बढ़ती गई। शिक्षा के प्रचार के कारण प्रशिक्षण युक्त व्यवसायों में भी स्त्रियों का प्रवेश उत्तरोत्तर बढ़ने लगा। दूसरे विश्वयुद्ध के कारण जीवन-निर्वाह का खर्च बढ़ने लगा और केवल एक व्यक्ति की आय से परिवार का भरण पोषण असंभव सा होने लगा। अतः मध्यमवर्गीय नारी भी श्रम बाज़ार में आने लगी। इस वर्ग की महिलाओं की संख्या बहुत ही कम है फिर भी इस वर्ग की सक्रियता और जागृति के कारण उसका प्रभाव अन्य सामाजिक संबंधों पर पड़े बिना नहीं रहता। तब समाज को बहुत आघात पहुंचता है। इस पृष्ठभूमि में प्रश्न यह उठता है कि महिलाओं का क्या कर्तव्य होना चाहिए गृहस्थी संभालना, बच्चों की देखभाल या फिर कमाने के लिए घर से बाहर जाना? यह केवल भारत में ही चर्चा का विषय नहीं वरन् सारे विश्व के लिए एक विवादस्पद विषय बन गया है।

आर्थिक उत्पादन क्षेत्र में स्त्रियों के प्रवेश से अनेक प्रश्न उपस्थित होते हैं जैसे स्त्रियों से कितना काम लेना चाहिये, स्त्रियों का वेतन किस आधार पर निर्धारित करना चाहिये आदि। संविधान ने भी स्त्रियों के काम करने के अधिकार को मान्य किया है

और प्रकार कानूनन स्त्रियों के लिए विभिन्न धंधों एवं व्यवसायों के द्वारा खुले हैं। श्रीमति पद्मिनी सेन गुप्ता ने अपनी पुस्तक ''वीमेन वर्कर्स ऑफ इंडिया'' (भारत की कार्यरत नारी) में करीब दस बारह प्रकार के कार्यों की सूची का विवरण दिया हैः–

1. कारखाने में कार्यरत स्त्रियां – कपड़े, तंबाकू, आटा मिलें, तेल मिल, इंजीनियरिंग से संबंधित कार्य तथा ऐसे अनेक क्षेत्रों में बड़ी संख्या में स्त्रियां काम करती हैं।

2. खनन उद्योग – कोयला, इस्पात, पत्थर, अभ्रक, मैगनीज इत्यादि की खानों में।

3. उद्यानिकी – चाय, काफी और रबर के बगीचों में ।

4. कृषि – कृषि संबंधी विभिन्न कार्यों में स्त्रियां हाथ बटाती हैं जैसे जुताई, बुवाई, खाद डालना, पानी देना इत्यादि। डेरी, सब्जी उत्पादन का काम तो प्रायः स्त्रियों का ही होता है।

5. अधोसंरचना उद्योग में – स्त्रियों के श्रम का उपयोग सड़क, पुल, बांध, भवन निर्माण आदि में भी किया जाता है।

6. गृहकार्य – भारत में औद्योगिक विकास की गति धीमी होने तथा कृषि पर अधिक दबाव होने के कारण अन्य विकसित देशों की तुलना में आज भी हमारे देश में घरेलू नौकर अधिकांशतः पुरूष ही होते हैं किन्तु रसोई पकाने, कपड़े धोने, बर्तन मांजने तथा बच्चों की देखभाल के लिए प्रायः स्त्रियां ही 'आया' के रूप में रखी जाती हैं।

7. लघु व्यवसाय – मत्स्यपालन, बीड़ी बनाने, रंगाई और छपाई का काम, खिलौने बनाने का काम, पापड़–अचार बनाने, दुकान संचालन ऐसे ऐसे अनेक छोटे व्यवसाय हैं जिसमें स्त्रियां काम करती दिखाई पड़ती हैं।

8. दफ़्तरों में भी अब अधिक संख्या में स्त्रियां कार्यरत हैं। रिसेप्शनिस्ट, सहायक, टायपिस्ट या टेलीफोन ऑपरेटर, पुलिस के पद पर स्त्रियाँ ही अधिक हैं। बहुत–सी महिलाऐं अपनी सिलाई की दुकान, प्रसाधन–कक्ष, सौंदर्य–सज्जा केन्द्र भी चलाती हैं।

9. टिकट निरीक्षक के रूप में रेलवे में तथा विमान परिचारिका के रूप में विमान में भी स्त्रियां काम करती हैं।

10. पंचवर्षीय योजनाओं के प्रावधानों के फलस्वरूप सामुदायिक योजनाओं के कारण स्त्रियों के लिये ग्राम सेविकाओं के रूप में आंगनबाड़ी कार्यकर्ताओं का मार्ग खुल गया है जहाँ गांव ही उसका मुख्य कार्यक्षेत्र है। इसके अलावा सामाजिक कार्यकर्ता के रूप में या फिर जनसंपर्क अधिकारियों के सहायक के रूप में स्त्रियां काम करती हैं।

11. शिक्षा के क्षेत्र में शिक्षिका, व्याख्याता, प्राध्यापक एवं प्रशासनिक पदों पर भी स्त्रियां बहुत बड़ी संख्या में कार्यरत हैं।

12. स्वास्थ्य क्षेत्र में भी स्त्रियां दाई, परिचारिका, स्वास्थ्य निरीक्षक, चिकित्सक के तौर पर सक्रिय दिखाई पड़ती हैं।

13. स्वतंत्र भारत में महिला वकील, बैरिस्टर या न्यायधीश तथा आयुक्त जैसे उच्च पदों पर आसीन महिलाऐं भी ध्यान आकृष्ट करती हैं।

इस प्रकार अनेक क्षेत्रों व कार्यों में स्त्रियां कार्यशील दिखाई पड़ती हैं। स्त्रियों का नौकरी या व्यवसाय में प्रवेश समाज की व्यक्तिगत दृष्टि से बहुत महत्वपूर्ण है।

चूंकि सभी धर्मों में स्त्रियों की समान स्थिति नहीं है, अतः यदि समग्र रुप से महिलाओं की स्थिति ज्ञात करना हो तो धार्मिक आधार पर स्त्रियों की स्थिति का अवलोकन आवश्यक प्रतीत होता है। इसी परिप्रेक्ष्य में आगे धार्मिक आधार पर स्त्रियों की स्थिति को विश्लेषित करने का प्रयास किया गया है।

1.7 हिन्दू धर्म में महिलाओं की स्थिति

हिन्दू महिलाओं की स्थिति वैदिक काल में अच्छी थी। धर्म शास्त्रों पर वाद विवाद हुआ करते थे जिसमें उस समय के प्रसिद्ध दार्शनिक भाग लिया करते थे। उस समय के 8 प्रसिद्ध दार्शनिकों में से एक महिला दार्शनिक ब्रह्मवादिनी भी थी। वैदिक काल की महिलाएं बहुत ही विद्वान व उच्च शिक्षित हुआ करती थीं, वे कई विधाओं में निपुण होती थीं। धार्मिक वाद–विवादों में भाग लेती थी। ऐसी महिलाओं को विदुषी, आचार्या, पंडिता आदि नाम से पुकारा जाता था।

वैदिक काल में महिलाऐं कृषि कार्य, तीर कमान बनाने एवं अन्य युद्ध सामग्री के निर्माण में सक्रिय भाग लेती थीं। रंगाई, एम्ब्राइडरी (कशीदाकारी) टोकनी निर्माण आदि के कार्य भी महिलाऐं किया करती थीं। शिक्षण का कार्य तो महिलाओं में अत्यंत

लोकप्रिय था। पुरूष शिक्षक की पत्नी को आदर से 'गुरू माता' कहा जाता था। जबकि स्वयं शैक्षिक कार्य करने वाली महिला को आचार्य के नाम से पुकारा जाता था। महिलाऐं चिकित्सा का कार्य भी करती थीं। रूसा नामक की महिला ने ''दाई की कला'' पर एक पुस्तक भी लिखी थी। महिलाओं को संगीत व नृत्य की शिक्षा भी दी जाती थी।

वैदिक काल में यह धारणा थी कि पत्नी को इतना शिक्षित होना चाहिये कि वह वैदिक संस्कारों एवं धार्मिक महत्व के अनुष्ठानों में भाग ले सकें। अशिक्षित पत्नी पति के लिए उपयुक्त नहीं मानी जाती थीं। शिक्षित कुमारियों को विदुषी कहा जाता था। ऐसी विदुषियों का विवाह भी उन्हीं के समान योग्य पुरूषों से, जिन्हें 'मनीषी' कहा जाता था, से होता था। कई विदुषी महिलाओं के श्लोक वेदों में पाये जाते हैं। इस प्रकार स्पष्ट है कि जहां तक शिक्षा का संबंध था स्त्रियों की स्थिति सामान्यतः पुरूषों की स्थिति से अधिक भिन्न नहीं थी।

सामाजिक दृष्टिकोण से वैदिक काल की स्त्रियों की स्थिति के संबंध में भिन्न भिन्न विचार देखने को मिलते हैं। एक विचार के अनुसार स्त्री को भगवान की सबसे बड़ी देन माना जाता है तो दूसरी ओर यह भी कहा जाता है कि ईश्वर प्राप्ति के मार्ग में स्त्रियाँ बाधक होती हैं। फिर भी इसके पर्याप्त प्रमाण हैं कि वैदिक काल में भारत में स्त्रियों को समान एवं महत्वपूर्ण सामाजिक स्थिति प्राप्त थी। सार्वजनिक जीवन में महिलाऐं महत्वपूर्ण रूप से भाग लिया करती थीं। इस प्रकार स्पष्ठ है कि वैदिक काल में महिलाओं की स्थिति पुरूषों के समान ही थी।

उत्तर वैदिक काल में स्त्रियों की स्थिति में परिवर्तन हुआ। इस समय धीरे धीरे यह भावना विकासित होने लगी कि वैदिक दृष्टि से स्त्री पुरूष से निम्न है। वह पुरूष से अधिक भावुक एवं कम विवेकी होती है इसलिए वे बाह्य वातावरण की शीघ्र ही शिकार होती है। उसमें सत्य की परख की योग्यता का अभाव रहता है। इसी प्रकार के विचार महाभारत में भी व्यक्त किए गए हैं।

धर्म शास्त्र काल में याज्ञवल्क्य संहिता, विष्णु संहिता व पराशर संहिताओं की रचना हुई जिसमें मनुस्मृति के नियमों को प्रधानता देकर स्त्रियों की वैदिक काल की स्वतंत्रता को और भी सीमित एवं प्रतिबंधित कर दिया गया। इस युग में स्त्रियों को संपत्ति अधिकारों से वंचित कर दिया गया। विवाह में कन्या की इच्छा का कोई महत्व नहीं रहा और उनका विवाह 10 से 12 वर्ष की आयु के मध्य करने का प्रावधान कर

दिया गया। इस प्रकार उत्तर वैदिक काल में महिलाओं की स्थिति दयनीय होने लगी थी।

1.8 जैन धर्म में नारी की स्थिति

जैन दर्शन में मोक्ष साधना केवल सन्यासी कर सकते हैं। दिगम्बर जैन समुदाय के अनुसार मोक्ष प्राप्ति के लिए दिगम्बर होना अनिवार्य है। स्त्रियां दिगम्बर नहीं हो सकतीं, उन्हें अपना पूरा शरीर ढांके रहने का विधान है। इसलिए उन्हें मोक्ष नहीं मिलता। जैन धर्म में गृहस्थ स्त्री तीर्थकरों का स्पर्श तक नहीं कर सकती। जैन धर्म के अनुसार नारी पुरूष सन्यासियों के आश्रम में अकेले नहीं जा सकती और पुरूष के रिक्त आसन पर नहीं बैठ सकती। स्त्री दीक्षा नहीं दे सकती चाहे वह जितना भी श्रेष्ठ हो। यहाँ तक कि महिला भी महिला को दीक्षित नहीं कर सकती।

जैन धर्म में ब्रह्मचार्य पर अत्याधिक जोर देने के कारण ही नारी पर इस तरह के कठोर प्रतिबंध लगा दिये गये थे। वैसे व्यवहार में जैन धर्म नारियों के प्रति सम्मान का भाव रखता है। अपवादस्वरूप स्वयं भगवान वर्धमान महावीर ने चन्दनबाला को दीक्षा ही नहीं दी अपितु गणनी प्रमुख भी बनाया था। आदिनाथ ने अपनी दोनों बेटियों ब्राहमी और सुन्दरी को दीक्षा दी थी।

जैन कवियों ने अपने ग्रन्थों में नारी को काफी सम्मानजनक स्थान दिया है। जैन धर्म में नारी की प्रशंसा, शील, सतीत्व और आचरण की पवित्रता के कारण की गई है।

1.9 ईसाई धर्म में महिलाओं की स्थिति

हिन्दु व मुस्लिम दोनों ही समाजों की तुलना में ईसाई समाज में स्त्रियों की स्थिति श्रेष्ठ है। शिक्षा का उचित लाभ उठाते हुए ईसाई समाज ने अपने को कई कुरीतियों से बचा लिया है। पिता के घर पर कन्याओं का पुत्र के समान ही स्वागत किया जाता है। उनके पालन–पोषण आदि का पुत्र के समान ही ध्यान रखा जाता था अर्थात् माता–पिता पुत्र व पुत्री में कोई भेदभाव नहीं करते थे।

पति के घर पर भी स्त्री को पूर्ण सम्मान मिलता है। वह पति की सहभागिनी व समान अधिकार वाली गृहस्वामिनी बन कर ही आती है। पति के साथ ही समान राय से वे गृहस्थी के कार्यों का संचालन करती है। ईसाई विवाह के आदर्श के अनुरूप वे पति की सहभागिनी, मित्र व सहयोगी होती है।

ईसाइयों में बाल विवाह नहीं होता। ईसाइयों में तलाक की छूट है। विधवा विवाह पर कोई निषेध नहीं है। विवाह, युवक व युवती की आपसी सहमति से ही होता है। इस प्रकार ईसाई स्त्री अपना जीवन साथी स्वंय चुनने के लिए स्वतंत्र है। यद्यपि माता–पिता भी उनके सहयोगी रहते हैं। दहेज की समस्या (कुछेक स्थानों को छोड़कर) इनमें नहीं है।

शैक्षणिक दृष्टिकोण से भी महिला शिक्षा की दर ईसाइयों में अन्य समाजों की अपेक्षा अधिक है। उन्हें चर्च में जाने व धार्मिक कार्य करने का अधिकार है। शैक्षणिक कार्यों में ईसाई स्त्रियाँ अधिक दिखाई देती है। इस क्षेत्र में जो भूमिका वह निभा रही है व सराहनीय है।

1.10 पारसी समाज में स्त्रियों की स्थिति

पारसियों में भी स्त्रियों की स्थिति अच्छी है। बाल विवाह उनमें भी नहीं होते। स्त्रियों को उच्च शिक्षा दिलाई जाती है। विधवाओं को विवाह करने की छूट भी उनमें है। 21 वर्ष से कम आयु में विवाह नहीं होते। स्त्रियों की स्वीकृति से ही उनका विवाह होता है। इनमें भी बहु विवाह नहीं होते। इनमें विवाह विच्छेद का अधिकार भी स्त्रियों को हैं।

1.11 मुस्लिम समाज में महिलाओं की स्थिति

मुस्लिम समाज के शिक्षित व्यक्तियों के आगे धार्मिक बंधन थोड़े शिथिल पड़ गये हैं। शिक्षा प्राप्ति के लिए धार्मिक कुठांओं को पीछे छोड़ता हुआ एक बड़ा वर्ग सामने आ गया है। जिन मुस्लिम परिवारों में 2–3 दशक पहले पर्दे का अधिक चलन था वहां अब पर्दा नाम मात्र को रह गया है। बहुत सारी मुस्लिम महिलाएं अकेले ही यात्रा करती है और अपने कैरियर के चुनाव के लिए पूर्ण स्वतंत्र है। नौकरियों में भी बड़े शहरों एवं महानगरों में सरलता से अब मुस्लिम समाज की लड़कियों ने प्रवेश किया है। उनके माता–पिता की तरफ से उन्हें अपना व्यवसाय करने की छूट है। पुरूष वर्ग के भी व्यवहार में पूर्णतः बदलाव देखा जा रहा है। जो पुरूष अपनी शिक्षित पत्नी को भी पूर्ण पर्दे में रखते हैं वह भी अपनी बेटी के लिए कोई पर्दे का बंधन नहीं चाहते। इन सभी बातों से धर्म का बंधन शिक्षित और उच्च वर्ग में शिथिल दिखाई देता है।

इन परिवारों के मुखिया अपने परिवार के लिए तो पूर्ण बदली हुई मानसिकता रखते हैं। परंतु समाज में वह धार्मिक विचारधारा को ही प्रदर्शित करते हैं। यद्यपि वे

धार्मिक विचार रखते हैं परंतु शिक्षा प्राप्ति के लिए एवं रोजगार प्राप्ति के लिए अपने पुत्र–पुत्रियों पर किसी प्रकार का बंधन नहीं रखते हैं। उन्हें परिवार से पूर्ण स्वतंत्रता मिली होती है जिससे इन माता–पिता की दोहरी भूमिका दिखाई पड़ती है। कहीं उनकी मानसिकता रूढ़िवादी होती है और कहीं प्रगतिवादी।

जबकि निम्न व मध्यम वर्ग के मुस्लिम परिवार अशिक्षा एवं धार्मिक बन्धनों के कारण अपनी स्त्रियों को पूर्ण स्वतंत्रता नहीं देते। उनको नौकरी, व्यवसाय आदि की पूर्ण छूट नहीं रहती। इस वर्ग की मानसिकता अभी पूर्णतः बदली नहीं है। इस वर्ग में अभी पर्दा प्रथा का चलन है।

इस्लाम में महिलाओं की स्थिति एवं उनके अधिकारों के बारे में पूर्ण रूप से तथ्य दिये गये हैं। एक आयत में अल्लाह ने कहा है ''निःसंदेह मुस्लिम पुरूष और मुस्लिम महिलायें, मोमिन (सज्जन) पुरूष और मोमिन महिलायें, आज्ञापालक पुरूष और आज्ञापालक महिलायें, सब्र रखने वाले पुरूष और सब्र रखने वाली महिलायें, आदर करने वाले पुरूष और आदर करने वाली महिलायें, दान देने वाले पुरूष और दान देने वाली महिलाऐं, उपवास करने वाले पुरूष और उपवास करने वाली महिलाऐं, अपने गुप्तांगों की रक्षा करने वाले पुरूष और अपने गुप्तांगों की रक्षा करने वाली महिलाऐं, अल्लाह को अधिक याद करने वाले पुरूष और याद करने वाली महिलाऐं इन सबके लिए अल्लाह ने मगफ़िरत अर्थात् स्वर्ग का फैसला किया है और बहुत विशाल दानकोष तैयार किया है।

इस आयत के अनुसार मुस्लिम पत्नी को नमाज़, रोज़ा, हज, ज़कात सभी धार्मिक कार्यों में पुरूष के साथ भागीदार रहना है एवं उनका फल भी महिला एवं पुरूष को समान देने का अल्लाह का निर्णय स्पष्ट है।

1.12 स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद महिलाओं की स्थिति

स्वतंत्रता प्राप्ति के पहले तथा उसके बाद के लगभग 25 वर्षों के दौरान महिलाओं की स्थिति में उतना परिवर्तन नहीं आया जितना की नारीवादी आंदोलन के बाद आया। साठ के दशक के अंतिम वर्षों एवं 70 के दशक के प्रारंभिक वर्षों में नारीवादी आंदोलन ने महिलाओं को न केवल परिवार में बल्कि सामुदायिक स्तर पर भी बराबरी का दर्जा दिलाने में अहम् भूमिका अदा की। बाद के वर्षों में महिलाओं के सशक्तिकरण की दिशा में सरकार, समाज तथा सामुदायिक स्तर पर अनेक कार्यों को संपादित किया गया। उन्हीं कार्यों में से एक कार्य है स्व–सहायता समूह का गठन,

पंचायती राज संस्था में महिलाओं के लिए आरक्षण आदि। पंचायती राज संस्थाओं के अंतर्गत महिला सशक्तिकरण का मुद्दा राजनीतिक एवं सामाजिक एजेंडे में अत्यधिक महत्वपूर्ण है। पंचायतीराज संस्थाओं में महिलाओं की अधिकाधिक भागीदारी को नीतिगत प्रश्रय देकर प्रशासन का हिस्सा बनाया गया। साथ ही विभिन्न विकास योजनाओं में भी ऐसे प्रयास होते रहे हैं जिनसे आर्थिक संसाधनों पर महिलाओं की पहुँच बढ़ाकर उनका सशक्तिकरण किया जा सके। इस तरह के प्रयासों के मामले में मध्यप्रदेश देश में अग्रणी है जहाँ कई प्रकार के कार्यक्रम एवं परियोजनाएँ क्रियान्वित की गई हैं। जिला गरीबी उपक्रमण परियेाजना (डीपीआईपी) एक ऐसी ही अभिनव परियोजना है जो विश्व बैंक द्वारा वित्त पोषित हैं एवं प्रदेश के 14 जिलों के 2932 गांवों में इसका क्रियान्वयन वर्ष 2001 से 2006 तक किया गया। इस परियोजना में गरीब परिवारों को समहित समूहों में संगठित कर उन्हें आर्थिक सहायता दी गयी एवं उनके क्षमतावर्धन के प्रयास किये गए ताकि वे स्वयं के लिये एक उपयुक्त एवं स्वपोषी या संवहनीय आजीविका निर्मित कर सकें। प्रजातांत्रिक सिद्धांतों पर आधारित यह गरीबी उन्मूलन की एक मांग आधारित परियोजना है जिसमें एक तरह की पृष्ठभूमि वाले गरीब परिवार मिलकर एक समहित समूह का गठन कर अपनी पसंद अनुसार एक आयवर्धक गतिविधि का चयन करते हैं जिसके लिये परियोजना उन्हें अनुदान एवं अन्य गैर वित्तीय सेवाएँ प्रदान करती है ताकि उनकी गतिविधि दीर्घकालिक एवं लाभदायक हो।

1.13 समहित समूह क्या है?

समूह आधारित विकास की योजनाओं की अवधारणा लगभग 30 वर्ष पुरानी है जब सामुदायिक विकास कार्यक्रमों में लक्षित वर्ग/हितग्राहियों को समूहों में गठित करके उनकी क्षमतावर्धन के प्रयास एवं वित्तीय सहायता उपलब्ध कराने की परिपाटी प्रारंभ हुई। इस अवधारणा को काफी बल मिला क्योंकि विशेष रूप से महिलाओं के स्वयं सहायता समूहों ने संतोषप्रद प्रगति प्रदर्शित की। यही कारण है कि आज विभिन्न सामुदायिक विकास कार्यक्रमों का क्रियान्वयन समूह आधारित होता है। समूह आधार पर सामुदायिक विकास की इस परम्परा से सबक लेकर विश्व बैंक द्वारा वित्त पोषित डीपीआईपी परियोजना ने मध्यप्रदेश के चयनित जिलों एवं ग्रामों में गरीबी उन्मूलन हेतु समूह आधार पर गरीब एवं साधनहीन ग्रामीण परिवारों को संगठित कर उनकी आजीविकावर्धन का प्रयास प्रारंभ किया एवं इन समूहों को समहित समूह नाम दिया गया। स्वयं सहायता समूह तथा समहित समूह के बीच मूलभूत अंतर को निम्न तालिका के माध्यम से समझा जा सकता है।

विवरण	स्वयं सहायता समूह	समहित समूह
अवधारण की आयु	लगभग 30 वर्ष	5 वर्ष
परियोजना/ कार्यक्रम का नाम	देश भर में क्रियानिवत कई शासकीय एवं गैरशासकीय कार्यक्रम	केवल म.प्र. डीपीआईपी में
वित्तीय प्रावधान	बैंक लिंकेज हेतु नाबार्ड के प्रावधानों अनुसार	केवल डीपीआईपी के वित्तीय प्रावधान/बैंक लिंकेज हेतु अलग से कोई प्रावधान नहीं।
सदस्यता	कम से कम 10 एवं अधिकतम 20	कम से कम 5 एवं अधिकतम कुछ भी
मुख्य गतिविधि	सामूहिक बचत एवं ऋण अनिवार्य एवं नियमित रूप से होती है एवं आवश्यकता अनुसार किसी अन्य आयवर्धक गतिविधि का संचालन	किसी आयवर्धक गतिविधि का संचालन ही मुख्य है। बचत एवं ऋण की कोई बाध्यता नहीं।

महिला सशक्तिकरण इस परियोजना का एक मुख्य उद्देश्य है। महिला सशक्तिकरण के लिये निम्न कारक आवश्यक समझे जाते है –

1. महिलाओं के दृष्टिकोण से उनका मूल्य अर्थात् उनकी पहचान
2. महिलाओं का उनकी इच्छा/आकांक्षा/पसन्द पर अधिकार व निर्धारण
3. महिलाओं का अवसरों एवं संसाधनों तक पहुँच का अधिकार
4. महिलाओं का उनके स्वयं के जीवन पर घर के अन्दर व बाहर नियंत्रण का अधिकार
5. राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर अधिक जायज सामाजिक एवं आर्थिक व्यवस्था निर्मित करने हेतु सामाजिक परिवर्तन की दिशा को प्रभावित करने की महिलाओं की योग्यता।

संक्षेप में, महिलाओं की स्थिति काफी उतार–चढ़ाव वाली रही है। वैदिक साहित्य के अध्ययन के अनुसार महिलाओं की स्थिति काफी बेहतर थी। उन्हें वे सभी अधिकार प्राप्त थे जो पुरुषों को प्राप्त थे। लेकिन जैसे–जैसे समय आगे बढ़ता गया वैसे–वैसे महिलाओं की अवनति प्रारंभ होती चली गई जो आज तक जारी है। यदि सभी धर्मों में महिलाओं की स्थिति देखें तो उनकी स्थिति में कोई विशेष अंतर दिखायी नहीं देता।

भारतीय उपमहाद्वीप के विभिन्न कालखण्डों में महिलाओं की स्थिति में कोई विशेष परिवर्तन दिखायी नहीं देता। भूमण्डलीकरण के इस युग में निश्चित तौर पर महिलाओं के मध्य साक्षरता की स्थिति में वृद्धि हुई है लेकिन अन्य क्षेत्रों में अभी लगभग वहीं स्थिति है जो स्वतंत्रता के पूर्व हुआ करती थी। अभी भी इस दिशा में कार्य किए जाने की आवश्यकता है। विभिन्न संगठनों तथा विषय–विशेषज्ञों द्वारा समूहों के माध्यम से महिलाओं की स्थिति में आये परिवर्तन को रेखांकित किया गया है लेकिन अपेक्षित परिणामों का आना अभी शेष है।